ब्रह्मचर्य की साधना

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

ब्रह्म को ईश्वर कहा गया है। ईश्वर की तरह जीवन जीना, आत्म नियंत्रण करना और उपस्थेन्द्रिय विषयक संयम करना ब्रह्मचर्य कहलाता है। इन्द्रिया अपने–अपने विषयों की ओर भागती हैं। जिस इन्द्रिय का जो विषय है वह विषय यदि उस इन्द्रिय को प्राप्त होता है तो वह संतुष्ट हो जाती है। मन विषयों की तरफ दौड़ता रहता है। बुद्धि उसे नियंत्रित करती है। प्रियता और अप्रियता के कारण हम किसी वस्तु के प्रति राग–द्वेष रखते हैं। प्रियता के प्रति आकर्षण होता है। आकर्षण से राग और आसक्ति उत्पन्न होती है। आसक्त में पड़कर मनुष्य अपने को नष्ट कर देता है। इसलिए मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण रखना आवश्यक है। सभी प्राणियों में स्त्री जाति के प्रति अधिक आकर्षण होता है। पशु–पक्षी, दानव–मानव सभी में ये प्रवृत्ति देखी जाती है। सन्तानोत्पत्ति के लिए स्त्री संसर्ग करना चाहिए ऐसा शास्त्रों में उल्लेख है। इससे अधिक स्त्री संसर्ग करना शक्ति को नष्ट करना है। जो व्यक्ति अपने ऊपर जितना अधिक संयम रखता है वह व्यक्ति उतना अधिक तेजस्वी होता है। ब्रह्मचर्य का तेज उसके मुखमण्डल से झलकता रहता है।

प्राचीनकाल में मानव जीवन की आयु सौ वर्ष मानकर पच्चीस–पच्चीस वर्षों में विभक्त कर दी गयी थी। इसे ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रमों में बांट दिया गया था। प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम कहलाता है। इस आश्रम में शिष्य गुरू के सान्निध्य में जाकर शिक्षा प्राप्त करता था। भारतीय शास्त्रों में कहा गया है कि ज्ञान अथवा विद्या से मुक्ति प्राप्त होती है। समाज में दो प्रकार के लोग होते है। एक तो वे लोग जो प्रत्येक कार्य समझकर बुद्धि से करते है और दूसरे वे लोग जो बिना समझे कार्य करते हैं। जो कर्म समझ कर किया जाता है, वही कर्म शक्तिशाली तथा सफल होता है। मनु के अनुसार जन्म से सभी मनुष्य शूद्र उत्पन्न होते है परन्तु आध्यात्मिक ज्ञान और कर्म से वे द्विज बन जाते हैं। शिक्षा मानव का सर्वांगीण विकास करती है।

गुरु के आश्रम में ब्रह्मचारी शिष्य बौद्धिक और मानसिक अनुशासन सीखता था। मानव का जीवन ज्ञान से ही धर्म प्रवण, नैतिक मूल्यों से युक्त, उच्च आदर्शों से संवलित और बहुमुखी व्यक्तित्व से युक्त होता है। अतः धार्मिक वृत्तियों का उत्थान, चरित्र का उत्थान, व्यक्तित्व का उत्थान, सामाजिक उत्तरदायित्वों का निष्पादन और सांस्कृतिक जीवन का उत्थान ब्रह्मचर्य का प्रमुख उद्देश्य है। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली इस उद्देश्य को सफल करने में पूर्ण समर्थ थी। प्राचीनकाल में मौखिक अध्यापन प्रचलित था। विद्यार्थी गुरु के सान्निध्य में रहकर शिक्षार्जन करता था। गुरु का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान था।

प्राचीनकाल में गुरु और शिष्य का संबंध पिता और पुत्र जैसा था इसलिए शिष्य का यह कर्त्तव्य था कि वह गुरु के प्रति द्रोह न करे। शिष्य अथवा विद्यार्थी के लिए विद्यार्जन के प्रति निष्ठावान तथा जिज्ञासु होना आवश्यक था। गुरू उसकी जिज्ञासु प्रवृत्ति और कर्त्तव्य बुद्धि की जानकारी रखता था। ब्रह्मचर्य आश्रम में शिष्य को सात्विक प्रवृत्ति से रहना पड़ता था। ब्रह्मचारी का यह कर्त्तव्य था कि वह असत्य भाषण न करे, प्रतिदिन स्नान करे, मधुमांस का सेवन न करे, दिनशयन, तेल मर्दन, क्रोध, लालच, मोह इत्यादि न करे। उसको अनेक आचार संबन्धी नियम भी पालन करने पड़ते थे।

ब्रह्मचर्य की साधना से मानव का तन मन स्वस्थ रहता है। मानव का यह शरीर हाड़–मांस का एक पुतला है। इस शरीर के आंतरिक और बाह्य रूप को समझना बड़ा कठिन है। वैज्ञानिक नित नये प्रयोग करते रहते है किन्तु इसके मर्म को अब तक नहीं समझ पाये है। मानव का शरीर माता के गर्भ में नौ महीने रहने के पश्चात् इस संसार में आता है। संसार में आने के पश्चात् यहां के वातावरण से परिचित होता है और वातावरण का प्रभाव उसके शरीर पर पड़ना शुरू हो जाता है। शरीर में किसी प्रकार का बाह्य विकार न आवे, जैसा है वैसा ही बना रहे तो शरीर स्वस्थ रहता है। स्वास्थ्य का मतलब है अपने मूलरूप में स्थित रहना। मूलरूप से तात्पर्य है आत्मा में अवस्थित रहना। आत्मा में स्थित रहना जीवन का सबसे बड़ा आनंद है।

ब्रह्मचर्य की साधना आत्मा की साधना है। आत्मा अमूर्त्त तत्व है। शरीर मूर्त्त है। मूर्त्त तत्व ही वातावरण से प्रभावित होता है। सुख दुःख की अनुभूति शरीर को ही होती है। शरीर स्वस्वथ

कैसे रहे यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है। जितनी भी प्रकार की धार्मिक क्रियाएं है या जितने क्रियाकलाप है वह सब शरीर के माध्यम से ही सम्पन्न होता है। कहा गया है शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् अर्थात् शारीरिक स्वास्थ्य को सुरक्षित रखना सबसे बड़ा धर्म साधन है। मनुष्य जीवन अत्यन्त दुर्लभ है। मनुष्य को अपने शरीर की रक्षा करनी चाहिए। स्वास्थ्य ही सबसे बड़ा धन है। 'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का वास होता है'—यह पुरानी कहावत सिद्ध करती हैं कि शरीर का मन पर काफी प्रभाव होता है। सामान्यतः अस्वस्थ व्यक्ति चिड़चिड़े स्वभाव के होते हैं। उदाहरण के लिए बीमार व्यक्ति को लें, जब उसका स्वास्थ्य गिरता जाता है, वह अत्यंत निराशावादी होता जाता है।